- चतुर्थ अध्याय -

हरिशंकर परसाई जी के निबन्धों में विभिन्न समस्यायें

हरिशंकर परसाई के निबंधो में चित्रित विभिन्न समस्याएं

१५ अगस्त, १९४७ को अंग्रेजों की गुलामी से हमें स्वतंत्रता प्राप्त हुई लेकिन देश की स्वतंत्रता एक शाप बनकर खडी हुई, जिसने भविष्य में टूटने – बिखरने का संकेत दिया। देश के नागरिकोने सुंदर सपना देखा लेकिन क्या करे उनका मोहभंग ही हुआ। दुर्भाग्य इस देश का देश के कर्णधार अपने कर्तव्य से च्युत होते चले गये। मुट्ठीभर लोगों ने देश के शासनतंत्र पर अपना अधिकार रखकर व्यक्तिगत हित में उसका दुरुपयोग करना शुरू कर दिया परिणामस्वरूप चारो तरफ भ्रष्टाचार पनप गया। व्यक्तिगत स्वार्थ ने यहां के नेताओं तथा बडे-बडे अधिकारियों को अंधा बना दिया। राजनीतिक जीवन के साथ ही सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक जीवन में भी समस्याएं, विसंगतियाँ तेजी से बढ़ती गयी। वर्तमान स्थिति यह है कि इन विसंगतियों की आज कोई सीमा नही है। जीवन के हर क्षेत्र में अनेक विसंगतियाँ अपना मुँह फैलाये खडी हैं, जिसने आदर्श जीवन मुल्यों की हत्या की है। जीवन का काई भी पहलू इन विसंगतियों, समस्याओं से अछूता नही रहा। केवल समस्याओं को चित्रीत करना परसाई का लक्ष्य नही रहा बल्कि जीवन की इस विकृत समस्याओं को उभरकर उनका निर्मूलन करना परसाई का लक्ष्य रहा है। इस दृष्टि से उनके निबंधों में चित्रीत समस्याएं निम्नलिखीत हैं।

अ) राजनीतिक समस्या --

आजादी मिलने के बाद देश में चारों ओर राजनीति हावी होती चली गई। जीवन जगत् का प्रत्येक क्षेत्र आज राजनीति से प्रभावित है। शुध्द और तत्वनिष्ठ राजनीति का आज देश में अभाव है जिसके परिणाम स्वरूप आज पूरा देश स्वार्थ प्रियता के दलदल में फँसकर दिन-ब-दिन विनाश की ओर बढ़ रहा

हैं। आज देश की राजनीति भ्रष्टाचार का पर्याय बन गई और त्याग और सेवा से उसका कोई सरोकार नही रहा। देश में जितने भी राजनीतिक दल और नेता हैं, वे सभी सुख-सुविधाओं के उपभोग को ही अपने जीवन का परम उद्देश्य माने हुए हैं। देश के नेताओं ने व्यक्ति-हित के सामने समाज-हित और देश-हित को तिलान्जली दे दी हैं। राजनीतिक नेताओं में सदाचार, परस्पर सहयोग, सद्भाव, विश्व बंधुत्व जैसी कोई बात नही रही बल्कि अनीति, अनाचार, भ्रष्टाचार, दुश्चरित्रता, गुण्डागर्दी उसके प्रधान अंग बन गये हैं। परसाई जी ने देश की उत्तरोत्तर भ्रष्ट होती राजनीति और नेताओं को लक्ष्य करके अनेक व्यंग्य निबंधों की रचना की हैं। वर्तमान राजनीति व्यक्तिगत स्वार्थ सिध्द करने का सबसे बडा साधन हैं। प्रत्येक व्यक्ति राजनीति की आड में अपने स्वार्थो को पूरा करने में लगा हैं। स्वार्थपूर्ति एवं यशलिप्सा की भावना से प्रेरित होकर वह राजनीति में प्रवेश करता हैं। आज नेताओं की परेशानी न देश की खातिर हैं, न जनता के खातिर, परेशानी का कारण सिर्फ उनके अपने स्वार्थ हैं। नेताओं और मंत्रियों को वही व्यक्ति प्रिय होता हैं जो वक्त पर उनकी स्वार्थ पूर्ति की जरूरत पूरी करता हैं और ऐसे ही व्यक्ति उनके कृपा के फल को प्राप्त करते हैं। नेताओं ने स्वार्थ के सामने दल-हित की भावनाओं को तिलान्जलि दे दी हैं। अपने दल में रहते हुए किसी प्रकार का स्वार्थ पूरा न होने पर उसे एक दल को छोड दूसरे राजनीतिक दल में शामिल होने में भी देर नही लगती। दलबदल की राजनीति स्वार्थ की मनोवृत्ति का ही परिणाम हैं। मंत्रियों एवं नेताओं की इस दलबदलु प्रवृत्ति पर व्यंग्य का प्रहार करते हुए परसाई जी लिखते हैं ; —

> "उन्होने बताया, सन १९५२ की बात हैं। पहला आम चुनाव होनेवाला था। उस समय कांग्रेस का टिकट मुझे न देकर मेरे प्रतिस्पर्धी मोहनलाल को दे दिया गया। बस मेरा सैध्दान्तिक मतभेद हो गया और मैने कांग्रेस छोड दी। सिध्दान्त का पक्का हूँ मैं। तभी समाजवाद के नेताओं ने कहा कि हम १९५२ में सरकार बनायेंगे, जिसे आना हो आ जाओ। मैं उनकी पार्टी में चला, गया। भई!, जो सरकार बनाने वाला हो, उसके साथ रहना चाहिए।" [१]

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (प्रजावादी समाजवादी), पृ.२९, ३०।

अब राजनीतिक दल और उसके नेता का उद्देश्य किसी भी तरह से सत्ता हासिल करना रह गया है। चाहे उसके लिए कुछ भी करना पड़े। ये नेता सत्ता हासिल करते हैं, जनता के सामने झूठे नारे लगाते हैं। लेकिन सत्ता हस्तगत करने के बाद कुछ नहीं करते सिर्फ वैयक्तिक स्वार्थ देखते हैं। नेताओं ने जनता के सामने "समाजवाद, गरीबी हटाओ" के नारे लगाये लेकिन उसपर अमल नहीं हुआ। संविधान के निर्देशक सिद्धान्त पर चलने का वादा किया लेकिन उसमें भी जनता को धोखा दिया गया। तब परसाई जी नेताओं के इन झूठे नारे और कथनी और करनी के अन्तरों की समीक्षा करते हुए नेताओं से सीधे प्रश्न करते हैं —

"इतना अनिश्चय इतना अविश्वास। क्या आजादी के पच्चीस वर्षों ने यही अनिश्चय और अविश्वास की मानसिकता दी है हमारी पीढ़ी को ? और यही हम आगामी पीढ़ी को विरासत में दे रहे हैं ? "[1]

इतना सब कुछ होते हुए देश के नेता चुप हैं, देश विनाश के गर्त में समाता जा रहा है लेकिन नेताओं ने आँखों पर पट्टी बाँध रखी है, उन्हे कुछ दिखाई नहीं दे रहा है। ऐसे समय परसाई आज के नेता की तुलना जादूगर से करते हैं, जो जनता को रोज नया जादू दिखा रहा है —

"इस देश में बड़े बड़े जादूगर हैं, जो छब्बीस सालों से आँखों पर पट्टी बाँधे हैं। जब वे देखते हैं कि जनता अकुला रही है और कुछ करने पर उतारू है, तो फौरन जादू का खेल दिखाते हैं। जनता देखती है, ताली पीटती है। मैं पूछता हूँ, "जादूगर साहब, आँखों पर पट्टी बाँधे राजनीतिक स्कूटर पर किधर जा रहे हो ? किस दिशा को जा रहे हो - समाजवाद ? खुशहाली ? गरीबी हटाओ ? कौन-सा गन्तव्य है ?" वे कहते हैं गन्तव्य से क्या मतलब ? जनता आँखो पर पट्टी बाँधे जादूगर का खेल देखना चाहती है। हम दिखा रहे हैं। जनता को और क्या चाहिए।"[2]

---

१ "वैष्णव की फिसलन", (तीसरे दर्जे के श्रध्देय), पृ.३१।

२ " — वही — (भारत को चाहिए : चादूगर और साधू), पृ.३३,३४।

सब कुछ जादू के समान क्षणिक हैं, झूठ हैं, फरेब हैं, साजिश हैं। इस देश का नेता न समाजवाद लाता हैं और न ही प्रजातन्त्र की रक्षा कर रहा हैं, वह तो दिन रात अपने स्वार्थ के विचारों में डूबा हैं।

इस प्रकार परसाई जी ने व्यापक और तीक्ष्ण दृष्टि से नेताओं और मंत्रियों का कोई दुराचरण, दूषित मनोवृत्ति, उनका ढोंग, दुमुँहापन, कथनी-करनी का फर्क, झूठी नारे बाजी, व्यक्ति हित के लिए दल हित, देश हित को तिलान्जलि देनेवाली प्रवृत्ति को उजागर किया हैं। इस देश की राजनीति को भ्रष्ट करनेवाले इन नेताओं के भ्रष्ट चरित्र और क्रिया-कलाप आज एक समस्या बन खडी हैं।

ब) सामाजिक समस्या --

सामाजिक स्थिति में भी परिवर्तन प्रत्येक युग में होते रहे हैं, परंन्तु सामाजिक परिवर्तन की गति उतनी तीव्र नही होती, जितनी कि राजनीतिक परिवर्तन। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् हमारे भारतीय समाज में परिवर्तन की गति अपेक्षाकृत अधिक तीव्र दिखाई देती हैं, इसका कारण यह हैं कि एक तरफ तो समाज-व्यवस्था बदली हैं, दूसरी ओर नये नये वैज्ञानिक अविष्कारों, औद्योगीकरण आदि के कारण व्यक्ति की विचारधाराओं में परिवर्तन हुआ हैं। वर्ग-संघर्ष की स्थितियाँ भी समाप्त और कम होने के स्थान पर बढ़ी ही हैं। राजनीतिक दलों ने अपनी स्वार्थ-सिध्दि के लिए जातिवाद पर आधारित राजनीति को प्रश्रय दिया। चुनावों का आधार भी इसी जातिवाद को बनाया गया, जिसके कारण साम्प्रदायिकता की भावना को समाज में बढ़ावा मिला। ऐसे समय हमारे नेता धर्म निरपेक्षता का सिध्दान्त भूल गये और सत्ता हासिल करना उनका एक मात्र लक्ष्य रहा। साम्प्रदायिकता की भावना को बढ़ावा मिलने से इस देश में साम्प्रदायिक दंगे, खून-खराबा, हत्या, लूट, आगजनी की घटनाएं बढ़ने लगी। जिसका पूरा श्रेय राजनीतिक दलों को हैं। इस प्रकार

जातिवाद और साम्प्रदायिकता के भावना के बीज समाज में बोने वाली राजनीतिक पार्टीयों की परसाई जी ने कटु से कटु आलोचना की हैं। इस साम्प्रदायिकता के भावना के कारण समाज दिन-ब-दिन विनाश की ओर बढ़ रहा हैं।

१) नयी और पुरानी पीढ़ी में संघर्ष --

आर्थिक विषमता और विपन्नताओं ने समाज का निरन्तर टूटने में काफी मदद की हैं समाज में बढ़ती हुई बेकारी, कुण्ठा, अनास्था, कटुता, द्वेश इन सभी ने व्यक्ति-व्यक्ति के बीच की खाई को बढ़ावा दिया। आज के व्यक्ति का जीवन टूटते-टूटते द्वैतग्रस्त हो गया हैं। आज हर व्यक्ति व्यापक सामाजिक, राष्ट्रीय हित के स्थान पर व्यक्तिवादी चेतना को लेकर जीवित हैं और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वह अनास्था, आशंका, अनिश्चय, स्वार्थपरायणता और क्षणवाद जैसी विघटनशील मनोवृत्तियों को अपनाता जा रहा हैं। उसकी ये मनोवृत्तियाँ सभी स्तरों पर दृष्टिगोचर हो रही हैं। आज समाज में पुराने आदर्श, पुरानी मान्यताएँ, संस्कार, आस्थाएं आदि सभी तेजी से टूट रही हैं, दूसरी तरफ नवीन विचार-धाराओं और मान्यताओं को पूरी तरह स्वीकार करने के लिए हमारा पूराना समाज तैयार नही हो पाया हैं। परिणाम स्वरूप पूरा समाज दिशाहीन बन रहा हैं। १९७० के बाद पीढ़ीयों का संघर्ष भी अधिक उग्र रूप में सामने आया हैं। नयी पीढ़ी ने हर क्षेत्र में पुरानी पीढ़ी को नकारा हैं, उसके साथ संघर्ष किया हैं, तभी तो तरूण पीढ़ी कहती है ; --

"पहले जन्में लोग अपनी सही-गलत मान्यता के लिए पीछे जन्मों को क्यों काटे ? एक पीढ़ी के विश्वासों के लिए दूसरी पीढ़ी क्यों चीरी जाये ?"[१]

राजनीतिक जीवन में बूढे नेता कुर्सी से चिपके हैं वे तरूणों को आगे नही आने देते, इस स्थिति को "नया खून पूराना खून" नामक व्यंग्य निबंध में व्यक्त

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (कन्धे श्रमवणकुमार के), पृ.११२।

किया है। धर्म के क्षेत्र में बूढ़े धर्मान्ध मंदीर-मसजीद जैसी समस्याओं को खडी कर नयी पीढ़ी को चीर रही है। परिणाम स्वरूप नयी और पूरानी पीढ़ी में संघर्ष चल रहा है।

२) आज के व्यक्ति के मनोवृत्तियों में बदलाव --

आज देश का हर व्यक्ति समाज और देश के प्रति अपने कर्तव्यों को भूलकर स्व-हित की भावना से भर उठा है। स्वार्थान्धता की प्रवृत्ति ने उसके हृदय में दूसरों के प्रति दया, ममता, करूणा, स्नेह, सहानुभूति जैसी भावनाएँ समाप्त करके ईर्ष्या, द्वेश-घृणा, असहिष्णुता जैसी भावनाओं को बढ़ावा दिया। व्यक्तिगत द्वेश, या मत्सर की भावना पर व्यंग्य करते हुए परसाई लिखते हैं ;

> "एक दफ्तर के एक कर्मचारी का तरक्की के कारण तबादला हुआ इसलिए उसकी बिदाई का समारोह आयोजित किया जाता है उसी दफ्तर का एक कर्मचारी कोने में बैठकर रो रहा था ; ऐसा लगता था कि वह उस आदमी से बहुत प्यार करता था। इस संदर्भ में पूछनेपर उसने बताया कि ; - "कि वह साला तरक्की पर जा रहा है।" [१]

समाज में व्यक्ति के मन में पलनेवाली द्वेश, या मत्सर की भावना को उद्धृत करना परसाई के व्यंग्य लेख का उद्देश्य है।

मनुष्य स्वार्थी होता है, अपनी स्वार्थपूर्ति की दायरे में फसकर उसमें संकुचित वृत्ति का प्रभाव अधिक बढ़ता है। अपनी स्वार्थ-पूर्ति के लिए उसे अनेक ढोंग रचाने पड़ते हैं। कभी वह परोपकरारी बनने का नाटक करता है, तो कभी देशभक्त होने का। विभिन्न महापुरूषों के जन्म-दिन समारोहों तथा अभिनन्दन समारोहो के आयोजनों के पीछे व्यक्तियों के अपने-अपने स्वार्थ जुडे रहते हैं, जिनकी पूर्ति के उद्देश्य से ऐसे समारोह आयोजित किये जाते हैं., न कि महापुरूषों के प्रति किसी प्रकार का आदर या सम्मान दर्शाने के लिए।

---

१ "सदाचार का ताबीज", (दू:ख), पृ.१३३।

परसाई जी ने ऐसे समारोहों के आयोजकों को अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है। स्वार्थ के लिए आज व्यक्ति अपने धर्म, ईमान को भी नीलाम चढ़ाने से नहीं चूकता। एक समय था, जब कि व्यक्ति अपने प्राणों की बाजी लगाकर अपने धर्म और ईमान की रक्षा करता था लेकिन आज के व्यक्ति को अपने ईमान की नहीं, दूसरे के ईमान की चिन्ता है। वह देखता है कि दूसरा आदमी बेईमानी तो नहीं कर रहा है। आज समाज में चारों तरफ बेईमानी और भ्रष्टाचार व्याप्त है। हर व्यक्ति बेईमानी करने के लिए मौके की तलाश में है। वही व्यक्ति आज ईमानदार है, जिसे बेईमानी करने का अवसर नहीं मिलता। परसाई को आश्चर्य इस बात का है कि आज हर व्यक्ति बेईमान है फिर भी चिल्लाता है कि बडी बेईमानी है। आज अगर नया लेखक महाभारत लिखना शुरू कर दे तो बात आगे नहीं बढ़ेगी। जूए में राज्य हार जानेवाले आज के पांडवों को आज की द्रौपदी तलाक दे देती। यह आज के व्यक्ति की बदली हुई मनोवृत्ति है। इसी प्रकार आज के व्यक्ति को केवल अपनी बहिन-बेटी ही बहिन-बेटी दिखाई देती है, दूसरों की बहिन-बेटीयों को वह बहिन-बेटियों के रूप में नहीं देखता। मनुष्य के इस प्रवृत्ति पर व्यंग्य करते हुए परसाई लिखते हैं ; --

"हमारी मुश्किल यह है कि हम हमेशा दूसरे की बीवी की खोज करते हैं। दूसरे की स्टेज पर आ जाये ; अपनी न आये। दूसरे की नहीं आती, तो कहते हैं कि बडे पिछडे हुए लोग हैं। हम पिछडे हुए नहीं हैं, जिन्होंने उसका मुरब्बा बनाकर घर में रख छोडा है।" [१]

इस प्रकार हम देखते हैं कि परसाई जी ने आज के मानव की विकृत मन मनोवृत्ति को अपने व्यंग्य का विषय बनाया है। इस प्रकार आज मानव की विकृत मनोवृत्ति आज एक समस्या बन गयी है जिसमें सुधार करना परसाई के व्यंग्य का उद्देश्य रहा है।

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (वो जरा वाइफ है "न"), पृ•६१।

३) समाज-सेवि संस्थाओं के मूल उद्देश्य में बदलाव --

स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद देशवासियों की सेवा करने के लिए भारत में जगह जगह अनेक सेवा-संस्थाओं का निर्माण किया गया लेकिन इन संस्थाओं के मूल उद्देश्य में बदलाव आता गया। देश में विधवाश्रम, अनाथालय, नारी-निकेतन, कन्या पाठशाला, संगीतशाला जैसी अनेक सेवाभावी संस्थाएं हैं, जिनके सहारे दिन-दलित, परितक्ता, मातहत महिलाओं को सेवा की जाती है लेकिन वही सेवाभावी संस्थाएं वासनापूर्ति के अड्डे बन गये हैं। अमीर लोगों की वासना-पूर्ति के लिए अनाथालय, विधवाश्रम, नारी-निकेतर से हर उम्र की औरत उचित दाम पर मिल जाती है। यह आज के समाज सेवा संस्थाओं की स्थिति है। "मानव-सेवा-संघ" जैसी संस्थाओं में यह दिखावा किया जाता है कि असाह्य कल्यान निधि से हम देश की गरीब जनता का उद्धार कर रहे हैं। असहाय कल्यान निधि केवल नाम रहता है, उससे एकत्र की हुई धन राशि सम्पन्न लोगों के ही काम आती है। देश की प्रगति के नाम पर ये सेवा भावी संस्थाएं जनता से चन्दा वसूल कर रहे हैं। इन संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने देशवासियों की सेवा के लिए मिलनेवाले अनुदान को वैयक्तिक स्वार्थ के लिए इस्तेमाल करने लगे और जनता से भी चन्दा वसूल करने लगे। ऐसे समाज-सेवि-संस्था और उसके कार्यकर्ताओं पर व्यंग्य का प्रहार करते हुए परसाई लिखते हैं; --

> "हे देशवासियों, गांधी-युग में "सेवा" नामक जो "धर्म" था, उसे गांधीजी के बाद धन्धा बना लिया गया है। इस धन्धे में जनता हमारी कर्जदार है।" [१]

इस प्रकार समाज-सेवा-संस्थाओं के मूल उद्देश्य में बदलाव आया है।

परसाई जी ने इन झूठे सेवा संस्थाओं उनके झूठे समाज-सुधारकों को अपने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है। ये झूठे समाज-सुधारक एक तरफ तो बडी बडी सार्वजनिक सभाओं में जाँति-पाँति, छुआ-छूत आदि के विरोध में भाषण देते हैं,

---

१ "सुनो, भाई साधो", (भारत सेवक-समाज), पृ.५२।

लेकिन अपने निजी जीवन में इन सब से वे जुडे रहते हैं। इस तरह इन सेवाभावी संस्थाओं के मूल उद्देश्य में बदलाव आया हैं जो एक समस्या के रूप में सामने आता हैं।

४) भारतीय समाज में नारी समस्या --

भारत के पुरूष प्रधान संस्कृति में सदियों से स्त्रीयों पर अन्याय, अत्याचार हो रहे हैं। आर्थिक तंगी के कारण स्त्री आज तक जो परदे के अंदर थी अब वह परदे के बाहर निकलकर पुरूष के कन्धे-से-कन्धा लगाकर काम कर रही हैं। उसे काम की तलाश में समाज के बडे बडे प्रतिष्ठित व्यक्तियों के पास जाना पडता हैं लेकिन हम जिसे सभ्य, प्रतिष्ठित आदमी समझते हैं, वे अवसर का लाभ उठाकर दीन-दलित औरतों का भोग करते हैं। इस स्थिति पर व्यंग्य करते हुए परसाई लिखते हैं -- "नौकरी के सिलसिले में सच्चरित्रता का प्रमाण पत्र बाँटनेवाला इस देश का प्रतिष्ठित व्यक्ति पहले नारी के कुवारेपन का टेस्ट लेता हैं और बाद में सच्चरित्रता का प्रमाण पत्र दे देता हैं।" विधवाश्रम, अनाथालय, नारी-निकेतन जैसी सेवाभावि संस्थाएं अमीर लोगों की वासनापूर्ती के अड्डे बन गये हैं। एक ओर नारी स्वतंत्रता की लडाई राजनैतिक स्तर पर तो लडी जाती हैं, तो दूसरी ओर नारीयों के साथ बलत्कार होने की खबरे अखबारों में सुर्खियों में छपती हैं। औरत तो राजनेताओं को चलती-फिरती वेश्या हैं, जिसका जब चाहा इस्तेमाल किया जाता हैं।

आज हम सब इक्कीसवी सदी की ओर चल रहे हैं फिर भी अपने समाज में स्त्री को पुरूषों के बराबरी का स्थान नही दिया जाता। अनेक क्षेत्रों में वह पुरूषों के कन्धे-से-कन्धा मिलाकर काम कर रही हैं फिर भी अपनी पुरूष प्रधान संस्कृति उसे तिरस्कृत कर रही हैं। स्त्री को बराबरी का स्थान देने से पुरूषों के अहंकार को ठेस पहुँचती हैं। परसाई कहते हैं आखिर इस पुरूष प्रधान संस्कृति में स्त्री का क्या स्थान हैं? इस बात पर प्रकाश डालते हुए परसाई जी लिखते हैं ; --

"ठीक कहता हैं वह। जब वह कद्दू काटता हैं, तब कोई एतराज नही करता, तो औरत को पीटने पर क्यो एतराज करतें करते है ? जैसा कद्दू वैसी औरत।" [१]

प्राचिन काल में लडकीवाले विवाह के समय अपनी स्वेच्छा से वर पक्ष को थोडा-बहुत उपहार दे देते है, उसे आधुनिक समाज में दहेज की संज्ञा दी जाती हैं। दहेज अब लडकीवाले की स्वेच्छा से नही, बल्कि यह एक मजबूरी बन गयी हैं। वर्तमान समय में दहेज का रूप इतना विकृत हो गया हैं कि इसे एक सामाजिक कलंक की संज्ञा दी जाती हैं। विवश माता-पिता के लिए कन्या का विवाह आज एक बडी कठीनाई बन गई हैं। न जाने कितनी विवाहिताओं को पिता द्वारा दहेज में मोटी-रकम न दिये जाने के कारण अपने प्राणों से हाथ धोना पडता हैं, कितनी मासूमों को ससुरालवालो द्वारा मार दिया जाता हैं। यह समस्या दिन-ब-दिन बढती जा रही हैं। सरकार ने दहेज प्रथा को बन्द करने के लिए कठोर कानून बनाये हैं, फिर भी इस समस्या का कोई समाधान नजर नहीं आ रहा हैं। एक ओर दहेज प्रथा के विरोध में लम्बे चौडे भाषण देते हैं और वही व्यक्ति अपने लडके की शादी में लडके के जन्म से लेकर शिक्षा तक का सम्पूर्ण खर्चा लडकीवालों से वसूल करते हैं। परसाई जी ने पिता द्वारा अपने लडके की कीमत लगाने की प्रवृत्ति की निन्दा की हैं।

"मेरे भाषण का विषय था -- "आजादी के पच्चीस वर्ष", सामने लडकियाँ बैठी थीं, जिनकी शादी बिना दहेज के नही होने वाली थी। बैल की तरह मार्केट में उनके लिए पति खरीदना ही होगा। वर का बाप जचकी तक का खर्च जोडकर ले लेगा।" [२]

नारी समाज में चिरकाल से ही अनेक रूढियों और अंधविश्वास घर किये हुए हैं चाहे वह शिक्षित स्त्री हो या अशिक्षित। जरा-सी विपत्ति आने पर नारी-समाज आज भी बाबाओ, ज्योतिषियों, तांत्रिको, फकीरों आदि की

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (आँगन में बैगन), पृ.८२।

२ "वैष्णव की फिसलन", (तीसरे दर्जे के श्रध्देय), पृ.२९।

ओर दौडता है और उनकी बातों पर विश्वास करता नजर आता है, ऐसी स्थितियों को परसाई जी ने व्यंग्य का लक्ष्य बनाया है।

५) यौण समस्या --

कोई भी औरत कभी कभी अपना जीस्म किसी के हाथ नही सौंपती तो उसे उसकी स्थिति मजबूर करती है। औरत इसीलिए वेश्या बनती है कि उसके बच्चे को रोटी मीले। नेता और धर्मान्ध दीन-दलित महिलाओं का जबरदस्त भोग लेते है। इस यौण समस्या को "पगडंडियों का जमाना", "हल्ला और कलंक का तंत्र" निबंधों में उजागर किया है।

६) बढ़ती हुई मँहगाई की समस्या --

व्यंग्य तो परसाई के रचना सृजन का प्राण है। अपने व्यंग्य रचनाओं से परसाई जी ने कितनी ही सामाजिक विसंगतियों को अभिव्यक्ति दी है। अपने व्यंग्य निबंधों के माध्यम से परसाई जी ने मुनाफाखोरी, कालाबाजारियों, भ्रष्टाचारियों का पर्दाफाश किया है, जिससे मँहगाई बढती चली गई। कमर-तोड मँहगाई ने आम आदमी के जीवन को दूभर बना दिया। एक तरफ तिजोरियों मे धन एकत्र होने लगा, तो दूसरी तरफ सूखी रोटियों के भी लाले पडने लगे। संसार रुपी चक्की में पिसनेवाली मनुष्यता के दुख दर्द का परिचय परसाई जी ने दिया है। बढ़ती हुई जनसंख्या ने जीवन-जीने के साधनों और बेरोजगारी की समस्या को और भी व्यापक बना दिया।

गलत राजनीति का ही यह नतिजा है कि घर से दूकान तक पहूँचते ही भाव बढ़ जाते है और घर से लाए पैसे कम पडते हैं। आये दिन बाजार से अनेक वस्तूएँ गायब होती रहती हैं। बाजार से वस्तूएँ गायब होने के पश्चात स्टॉक - कीपरों द्वारा उन्हे अतिरिक्त कीमत लेकर बेचा जाता है। इस प्रकार यह व्यापारी, मुनाफाखोर आदि देश की जनता का आर्थिक शोषण करते हैं।

व्यापारी वर्ग ने "मिलावटी सभ्यता" को अपनाया हैं। "मिलावट की सभ्यता" इस निबंध में परसाई जी ने "महाजनी सभ्यता" की पोल खोली हैं। भारत के व्यापारी पैसों के लालच में मार भी खा सकता हैं पर मिलावट करना नही छोडेगा चाहे आंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की साख रहे या न रहे पर ये व्यापारी मिलावटी सभ्यता का प्रचार प्रसार करते रहेंगे ; जैसे ; "शुध्द माल मुर्दाबाद ! मिलावटी संस्कृति जिंदाबाद ! महाजनी सभ्यता अमर हो। ऐसे मुनाफाखोर, मिलावटी माल बेचनेवाले भारत के व्यापारियों की पोल खोलते हुए परसाई लिखते हैं ; —

"महान समन्वित संस्कृतिवाले भारतीय व्यापारी इलायची में कचरे का समन्वय करेंगे, गेहूँ में मिट्टी का, शक्कर में सफेद पत्थर, मक्खन में स्याहीसोख कागज का। जो विदेशी हमारे माल में "मिलावटी की शिकायत करते हैं वे नही जानते कि यह मिलावट नही हैं, "समन्वय" हैं जो हमारी संस्कृति की आत्मा हैं।" [१]

व्यापारी वर्ग के मुनाफाखोरी प्रवृत्ति के कारण मँहगाई दिन-ब-दिन बढ़ती ही जा रही हैं। आसमान छूती किमत में आम आदमी का जीना दुष्कर हो गया। राशन की शक्कर या खुले कोठे की शक्कर गायब होती हैं, किन्तु यहाँ तो पूरी शक्कर से लदी रेलगाडी ही गायब हो जाती हैं। शक्कर खाद्य हैं और उसका अभाव या आसमान छूती किमत का असर सामान्य जन-जीवन पर पडता हैं। परसाई जी बताते हैं कि स्मगलिंग करनेवालों को हथकडी नही पहनाई जा सकती, क्योंकि उसकी पहुँच उपर तक हैं, यह आज के युग का तथ्य हैं। यह राजनीतिक जीवन का तथ्य हैं कि स्मगलर, कालाबाजारियों का राजनीतिज्ञो, और शासन तन्त्र के बडे बडे लोगों से सम्बन्ध होते हैं, जिसके कारण देश में स्मगलिंग होता ही रहेगा। परसाई जी के अनुसार "दाने-दाने पर कालाबाजारियों का नाम लिखा हुआ लगता हैं।" इस संदर्भ में परसाई जी ने अर्थमंत्री की नीति और व्यवहार पर तीक्ष्ण व्यंग्य किया हैं।

---

१ "सुनो भाई साधो," (मिलावट की सभ्यता), पृ॰५,६।

आर्थिक संकट के इस युग में करों के भार ने व्यक्ति के जीवन में और भी संकट उत्पन्न कर दिये हैं। ज्यो ही सरकार द्वारा वस्तुओं पर टैक्स बढाये जाते हैं, उनकी कीमते उतनी ही ज्यादा होती जाती हैं। परिणाम स्वरूप मँहगाई निरन्तर बढती जा रही हैं। कांग्रेस ने इस देश पर अधिक दिन तक राज्य किया हैं। कांग्रेस के द्वारा मँहगाई और गरीबी को दूर करने के प्रयास किये गये लेकिन वे सभी भ्रष्ट मंन्त्रियों और नेताओं की स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण नाकामयाब ही रहे। व्यापारी, नेताओं और अफसर की मीली जुठी साठ-गाँठ ने इस देश में भ्रष्टाचार और बेईमानी बढती गई। गरीबी हटाने के लिए जो भी प्रयास किये गए, वे सभी निष्फल सिध्द हुए। "गरीबी हटाओं" का नारा दिया गया और समाजवाद लाने के वायदे किये गये, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार दिया जायेगा। लेकिन आम जनता की गरीबी आज भी ज्यों-की-त्यों बनी हुई हैं। गरीबी हटी केवल नेताओं और मंन्त्रियों के घरों की। अपने अपने घरों की गरीबी हटाकर इन लोगों ने अपने कर्तव्यों की इतिश्री समझ ली।

७) बेरोजगारी की समस्या —

बढती हुई लोकसंख्या के कारण अपने देश में बेकारी की समस्या हर जगह मूँह फैलाये खडी हैं, जिसका हल होना असंभव हैं। देश का हर एक क्षेत्र राजनीति से प्रभावित हैं राजनीति की तरह इन्टरव्यू के समय वह उम्मीदवार किस नेता, मंत्री का रिश्तेदार हैं यही देखकर उसे नौकरी दी जाती हैं। "एक मामूली एम•एल•ए• का दामाद जहाँ अच्छी नौकरी पा जाता हैं।" [१]

उसकी योग्यताएं क्या हैं यह नही देखा जाता। इन्टरव्यू के समय जिसे लेना हैं, उसके लिए अलग प्रकार के प्रश्न और जिसे नही लेना असके लिए अलग प्रकार के प्रश्न पूछे जाते हैं। जिसके कारण योग्यता सम्पन्न उम्मीदवार

१ "जैसे उनके दिन फिरे", (फेमिली प्लैनिंग), पृ•९९।

बेकारी की समस्या के शिकार बने दर-दर-ठोकरें खाते हुए भटक रहे हैं। नौकरी पाने सिर्फ योग्यताएं काम नहीं आतीं, तो इसके लिए किसी नेता के सिफारिशी चिट्ठी का होना भी जरूरी हैं। परसाई कहते हैं कि हर एक व्यक्ति और उसकी योग्यताएं सच हैं फिर भी नौकरी पाने के लिए बेईमानी की सिफारिशी चिट्ठी की जरूरत होती हैं। आर्थिक तंगी के कारण स्त्री आज परदे से बाहर निकलकर, उसे काम की तलाश में समाज के बड-बडे व्यक्तियों के पास जाना पड रहा हैं। लेकिन ये बडे आदमी पहले नारी के कुंवारेपन का टेस्ट लेना चाहते हैं और उन्हे सच्चरित्रता का प्रमाण पत्र दे देते हैं।

८) "शराब बंदी नारा" एक समस्या --

जिस तरह देश में "गरीबी हटाओ" का नारा लगाया जाता हैं, उसी तरह "शराब बंदी" का नारा लगाया जाता हैं लेकिन दूसरी ओर अपने देश में नेता, अफसर और ठेकेदार मिलकर हाथभट्टी का गैर कानूनी धंधा चलाते हैं। इसीलिए देशी हो या विदेशी, अपने देश में शराब बंदी नहीं होगी। इस समस्या को "जहरीली शराब" नामक निबंध में व्यक्त किया हैं।

९) लोकसंख्या की समस्या --

बढती हुई लोकसंख्या के कारण समस्याओं का अंत होना कठिन हैं, चाहे भूख की समस्या हो या बेकारी की। बढती हुई लोकसंख्या के कारण लोगों को हर समय आर्थिक तंगी का सामना करना पड़ेगा। बढती हुई जनसंख्या के कारण देश को अनेक समस्याओं का सामना करना पड रहा हैं। इसलिए आज लोगों को "परिवार नियोजन" का महत्व समझना चाहिए। लेकिन अपने देश का हर व्यक्ति चाहे वह शिक्षित हो या अशिक्षित बच्चे पर बच्चे पैदा ही करता रहता हैं,। ऐसे कितने शिक्षीत लोग हैं जिनके चार-पाँच बच्चे होते हैं। इस तरह

"परिवार नियोजन" का महत्व न समझकर बच्चे पर बच्चे पैदा करनेवाले लोगों को परसाई जी ने "फैमिलि प्लैनिंग" नामक व्यंग्य लेख में सचेत किया हैं कि अधिक बच्चे पैदा करना विनाश की खाई में लोटना पड हैं।

"इसके बच्चे न भर-पेट खा पाते हैं, न कपडे पहन पाते। भूखे, मरियल, गन्दे बच्चे हैं इसके। न स्वास्थ, न शिक्षा, न संस्कार, न कोई भविष्य! मैं इसका सातवाँ लडका रहूँगा। जरा मेरी हालत की कल्पना किजिए।" [१]

बढती हुई लोकसंख्या के कारण व्यक्ति को आर्थीक कठिनाई का सामना करना पडता हैं, जिसके कारण परिवार का खर्चा उठाना व्यक्ति को मुश्किल होता हैं। परिवार के सदस्य न भर-पेट खा पाते हैं, न अपने इच्छा से पहन पाते हैं। उन्हे स्वास्थ मिलता हैं, न उनके बच्चों को अच्छी शिक्षा मिलती है, न संस्कार और न कोई भविष्य होता हैं। बढती हुई लोकसंख्या के कारण लोगों को रहने के लिए जगह नही मिल रही हैं। एक ओर पाँच, छ लोगों का परिवार गंदे मुहल्ले में बदबुदार कमरे में अपना जीवन बीताता हैं तो दुसरी ओर आलीशान महलों में दो नंबर का धंधा करनेवाले लोग ऐश-ओ-आराम की जीन्दगी काट रहे हैं। सामान्य आदमी कभी कार से नही घुमेगा और न ही उसके जीवन में रोशनी फैलनेवाली हैं। बढती हुई लोकसंख्या के कारण आम आदमी को आनेवाला दिन जानेवाले दिन के समान होता हैं, जिसके बारे में वह कभी शिकायत नही करता, एक तृप्त आदमी की तरह वह अपना जीवन-यापन करता हैं, जिसके प्रति "एक तृप्त आदमी" नामक व्यंग्य लेख में परसाई जी ने सहानुभूति व्यक्त की हैं।

"वही क्रम रोज ····· उठना। कोयले का मंजन। फीकी चाय। पान की दूकान का अखबार। ट्यूशन। कोट के नीचे फटी कमीज। सडक के किनारे किनारे स्कूल यात्रा। नमस्कार। अँग्रेजी, गणित, इतिहास, विज्ञान। हनुमान जी के दर्शन। सडक के नल से पानी। तुम मुझे बहुत अच्छी लगती हो।" [२]

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", (फैमिली प्लैनिंग), पृ॰९९।

२ "काग भगोडा", (एक तृप्त आदमी), पृ॰२७।

बढती हुई लोकसंख्या के कारण व्यक्ति को हर वक्त समस्याओं का सामना करना पडेगा, उसके जीवन में सुधार संभव नही हैं। जनसंख्या की वृध्दि ने जीवन-जीने के साधनों की कमी और बेरोजगारी की समस्या को और भी व्यापक बना दिया।

सामाजिक व्यंग्य का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत और व्यापक हैं। राजनिती के समान सामाजिक जीवन में भी विसंगतियों की कहीं कोई सीमा नहीं हैं। सामाजिक जीवन के हर पहलु पर अनेक विसंगतियाँ फैली हुई हैं। समाज से सम्बंध रखनेवाले व्यक्ति, संस्था, वर्ग, सम्प्रदाय जहाँ कहीं भी विसंगति दिखाई दी हैं, परसाई जी ने उन पर व्यंग्य किये हैं। उपर्युक्त विसंगतियों के साथ ही परसाई जी ने रईसों की भोग-विलास पूर्ण प्रवृत्ति, मिथ्या अहंकार दर्शानेवाले लोग, पुरोहितों, पण्डितों की हरामखाऊ प्रवृत्ति, पेशेवर गुण्डों, बदमाशों, आधुनिक दादा, भिक्षावृत्ति में सलग्न लोगों, साधुओं के निकम्मेपन तथा भोग-विलास की प्रवृत्तियों, दूसरों की निन्दा करने में सलग्न लोगों आदि सभी को व्यंग्य का लक्ष्य बनया हैं।

१०) देश की आजादी एक समस्या --

अपने देश की आजादी अपने आप में एक उलझन हैं, जिसने नैतिकता, कायदे-कानुन आदि की हत्या की हैं। सभी अनुशासन हीन बन बैठे हैं। इस समस्या को "बाँये क्यों चले" इस निबन्ध में व्यक्त किया हैं।

क) सरकार के प्रशासनिक विभाग की समस्याएं --

राष्ट्र का विकास उसकी शासन व्यवस्था पर निर्भर करता हैं। इसी कारण देश की शासन व्यवस्था कुशल, निःस्वार्थी, निःपक्षपाती होनी चाहिए लेकिन राजनीति के बढते हुए दबावतंत्र के कारण शासकीय कार्यालयों में विसंगतियाँ

दिखाई देने लगी। प्रत्येक क्षेत्र में व्यवस्था और शान्ति के स्थान पर अव्यवस्था और अशान्ति बढ़ती गई। संसद देश की सर्वोच्च संस्था है। जनता संसद और विधान सभाओं के लिए अपने प्रतिनिधि चुनकर भेजती है। वही प्रतिनिधि सारी मर्यादाओं को ताक में रखकर आपस में ऐसा आचरण और दुर्व्यवहार करते हैं कि जिसे देखने और सुनने में शर्म आती है। वर्तमान में संसद और विधान-सभाएं नेताओं का अखाड़ा मात्र बनकर रह गई हैं। कभी सदस्यों में आपस में धक्का-मुक्की होती है, कभी हाथापाई, कभी गाली-गलौज और कभी कभी आपस में जूता-चप्पल फेंकने-मारने तक की स्थिति पैदा हो जाती है —

"पिछले विधानसभा अधिवेशन में अध्यक्ष ने समाजवादी विधायक क्रान्तिनादजी को पुलिस के द्वारा उठवाकर सदन से बाहर करवाया था।" [१]

कभी कभी स्थिति इससे भी भयंकर हो जाती है। सदस्य रोष में आकर अपनी-अपनी कुर्सियां तोड़कर उनकी टांगे एक-दूसरे पर फेंककर मारने लगते हैं। परसाई जी ने इसी स्थिति पर व्यंग्य किया है। अव्यवस्था तथा अशान्ति का यह रोग केवल संसद और विधान-सभाओं तक ही सीमित नहीं है; अपितु विभिन्न सरकारी विभाग इसके शिकार हैं। शिक्षा के प्रचार-प्रसार हेतु सरकार ने गाँव-गाँव में पाठशालाएं खोल रखी हैं किन्तु वहाँ अध्यापकों तथा अन्य सामग्री एवं भवनों का अभाव है। अस्पताल खुले हैं लेकिन वहाँ अभी डॉक्टर, कर्मचारी तथा दवाएं आनी शेष हैं। देश के सामने अनेक समस्याएं, दफ्तरों में भ्रष्टाचार का बोलबाला है। रिश्वत और सोर्स के बिना कोई काम हो पाना ही असम्भव है।

"मैं भी अब झूठा हिसाब रखूँगा। उसे घूस देकर सच्चा बनवा लिया करूँगा। सचाई के लिए घूस देने की अपेक्षा यह ज्यादा अच्छा है कि झूठ के लिए घूस दूँ। इतना मँहगा ईमान अपनी हैसियत के बाहर है। इससे तो बेईमानी सस्ती पड़ेगी।" [२]

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (लोहियावादी समाजवादी), पृ०३२।

२ " — वही — पृ०७७।

सरकार ने समाज में व्यवस्था और शान्ति बनाये रखने के उद्देश्य से पुलिस व्यवस्था का निर्मान किया।पुलिस का कार्य जन-सामान्य के जीवन से लेकर उसकी धन-सम्पत्ति तक की रक्षा करना हैं। किसी भी समाज में कानून, व्यवस्था शान्ति और अनुशासन वहाँ के पुलिस-विभाग की सतर्कता, कर्तव्य परायणता एवम् ईमानदारी पर निर्भर रहती हैं। विभिन्न विभागों में व्याप्त भ्रष्टाचार के समान पुलिस-विभाग में भी भ्रष्टाचार की कमी नहीं हैं। आजादी के बाद इस देश के प्रत्येक क्षेत्र में हावी होती हुई भ्रष्ट राजनीति ने पुलिस-विभाग को भी भ्रष्टाचार की बहती गंगा में बहा दिया। नेताओं का बढता हुआ दबाव, उनके द्वारा पुलिस के प्रत्येक कार्य में किये जानेवाले हस्तक्षेप से पुलिस-विभाग में अव्यवस्था और भ्रष्टाचार तेजी से बढता गया। परिणामस्वरूप जनता की रक्षा के लिए कायम की गई पुलिस भक्षक रूप में दिखाई देने लगी। परसाई जी ने शान्ति और व्यवस्था कायम रखने के उद्देश्य से पुलिस द्वारा आँसू गैस छोडने, लाठी चार्ज करने एवं गोली चलाने की निन्दा की हैं। पुलिस और चोरों की सांठ-गाँठ पर भी परसाई ने व्यंग्य किया हैं --

> "रात के सन्नाटे में पुलिस की सीटी सुनता हूँ, तो समझ जाता हूँ कि सरकार कह रही हैं -- चोरों, अब हम आ रहे हैं। चोरी कर ली हो तो जल्दी भागो। हम अगर पकड लेंगे, तो जेल में डाल देंगे।" [१]

चोरी हो जाने या डकैती पड जाने के काफी देर बाद वहाँ पुलिस पहुँचती हैं और फिर अधिकारी एवं सिपाही बडी मुस्तैदी से जाँच-पडताल का ढोंग रचते हैं। परसाई जी ने पुलिस विभाग की इस स्थिति की व्यंग्यात्मक आलोचना की हैं।

परसाई जी ने सरकार की नीतियों की व्यंग्यात्मक आलोचना की हैं। सरकार द्वारा जमींदारों और पूँजीपतियों को उनकी जमीन छीनने की धमकी देने को परसाई जी सरकार की चाल मानते हैं; क्योंकि इस प्रकार की धमकी से

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (सोने का साँप), पृ॰४५।

जमींदार और पूँजीपति सतर्क हो जाते हैं। अभी कुछ वर्ष पूर्व सरकार ने जमींदारों को चेतावनी दी थी कि जिसके पास पचास एकड़ से ज्यादा जमीन होगी, उसकी जमीन छीन ली जायगी। जिसके पास पचास एकड़ से ज्यादा जमीन थी या तो उसने बाकी जमीन बेचकर पैसे बना लिये या फिर अपने भाई-भतीजे, बेटा-बेटी यहाँ तक कि नोकर-चाकर तक के नाम कर दी। [१] इस प्रकार परसाई जी ने सरकार की नीतियों की कटु आलोचना की है, जो जनता को बेवकूफ बनाती हैं।

देश के आर्थिक विकास के लिए अनेक योजनाएं कार्यान्वित की गई लेकिन इन योजनाओं पर व्यय किये जाने वाले धन का आधे से ज्यादा भाग नेताओं, अफसरों तथा दलालों के पेट में ही समाता गया।

> "अफसर के इतने बडे मकान बन जाते हैं कि वह राष्ट्रपति को किराये पर देने का हौसला रखता हैं।" [२]

परिणाम स्वरूप देश विदेशी ऋण से दबता गया।

इस प्रकार परसाई जी ने आपेन व्यंग्य निबंधों के माध्यम से सरकार की नीति, योजनाएं और कार्यक्रमों, प्रशासनिक अधिकारों की व्यंग्यात्मक आलोचना की हैं। प्रशासनिक क्षेत्र के बढते हूए भ्रष्टाचार के कारण जनता की समस्याएं कम होने के स्थान पर बढी हैं। जिसके कारण परसाई जी ने प्रशासनिक विसंगतियों पर प्रकाश डाला।

ख) आज की शैक्षणिक व्यवस्था एक समस्या --

शिक्षा व्यक्ति और समाज का मूलाधार होती हैं। वही समाज अधिक से अधिक तरक्कि कर सकता हैं, जिसके नागरिक, सभ्य, सुशिक्षित एवं

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (सोने का साँप), पृ॰४४।

२ " -- वही -- (हम, वे और भीड), पृ॰१०।

सुसंस्कृत होते हैं, जो समाज के प्रत्येक व्यक्ति को आदर्श नागरिक बना सके। शिक्षा अपने इस उद्देश्य की पूर्ति तभी कर सकेगी, जब, शिक्षा-संस्थाओं का संचालन करनेवाले समाज के सच्चरित्र और श्रेष्ठ व्यक्ति होंगे। यही शिक्षा भ्रष्ट और दूषित मनोवृत्तिवाले व्यक्तियों के हाथों पहुँच कर अपने कर्तव्य उद्देश्य से च्युत होती हैं और समाज के पतन का कारण बन जाती हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात इस देश में शिक्षा-सुधार के लिए कोई प्रयास नहीं किये गये, बल्कि चारो तरफ बढते हुए भ्रष्टाचार-अनाचार ने शिक्षा जगत में भी प्रवेश किया। शिक्षा संस्थान सार्वजनीक मालमत्ता न होकर व्यक्तिगत जागीर बन गई हैं। गलत हाथों में पडने के कारण शिक्षा सेवा न रहकर दूसरे, व्यवसायों के समान एक व्यवसाय बन गई हैं। शिक्षा का संचालन निरक्षरों के हाथो पहुँच जाने से और भी अधिक अव्यवस्था बढ गयी। शिक्षा संस्थान व्यक्तिगत मालमत्ता होने के कारण उसमें जो व्याप्त दोष है उस पर "प्राइवेट कालेज का घोषणा-पत्र" नामक व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने प्रकाश डाला हैं। शिक्षा के राजनीतिकरण ने भ्रष्टाचार तथा अनुशासन-हीनता को और भी अधिक बढावा मिला हैं। र राजनीतिक कीटों ने शिक्षा-जगत में प्रवेश करके सम्पूर्ण शिक्षा-व्यवस्था को और भी अधिक भ्रष्ट करके रख दिया हैं। स्कूली शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालयीन शिक्षा बढते हुए राजनीतिक दबावों से संतप्त हैं। प्रत्येक स्तर पर नेतागीरी हावी हैं।

आज की हमारी सम्पूर्ण शिक्षा-व्यवस्था में अव्यवस्था तथा अराजकता व्याप्त हैं। एक तरफ छात्र-समुदाय विद्या अध्ययन के कर्तव्य को भूल कर अनुशासनहीन तथा दूसरे क्रिया-कलापों में ज्यादा रूचि ले रहा हैं और परिक्षा के समय अनुचित साधनों का प्रयोग कर उत्तीर्ण होकर डिग्री हासिल कर लेता हैं। प्रथम श्रेणी प्राप्त करने के लिए अब किताबों का ढेर लगाना बेवकूफी हैं। परिक्षा के बाद जरा-सी भागदौड करने से ही प्रथम श्रेणी प्राप्त हो जाती हैं। पहले यह आम प्रचलन नहीं था, व्यक्ति इस तरह का कार्य करने और कराने में संकोच का अनुभव करता था, लेकिन इधर कुछ वर्षों से नकल करना, कापियों में नम्बर

बढ़ाना एक रोग-सा लग गया है। परसाई जी ने अपने "पगडंडियों का जमाना" और "एकलव्य ने गुरू को अंगूठा दिखाया" नामक व्यंग्य निबंध में इस प्रवृत्ति पर तीखे व्यंग्य प्रहार किये हैं। इस प्रकार शिक्षा आज अपने मूल उद्देश्य से च्युत होती रही है जो एक समस्या बनकर सामने खड़ी है जिसपर परसाई जी ने प्रकाश डाला है।

ग) धार्मिक समस्या --

भारतीय संविधान सभी धर्मों को समान अधिकार देता है। भारत एक धर्म-निरपेक्ष राष्ट्र है। लेकिन देश की धार्मिक स्थिति वर्तमान में सर्वाधिक विस्फोटक है और कोई राजनीतिक, या सामाजिक शक्ति इस स्थिति को सुधारने में सक्षम नहीं है। वर्तमान भारतीय राजनीति धर्म और साम्प्रदायिकता का सहारा लेकर ही खेल रही है। इसलिए धर्म के नाम पर धर्मान्धता की प्रवृत्ति समाप्त होने के स्थान पर बढ़ती ही जा रही है। वर्तमान युग में धर्म अलौकिक सुख-साध्य का माध्यम नहीं रहा, अपितु वह इसी धरती पर सुख-सुविधाओं को प्राप्त करने का साधन बन गया है। महात्मा गांधी के बाद कोई भी ऐसा नेता नहीं हुआ, जो धार्मिक संगठन की दिशा में ठोस कदम उठाये या धार्मिक स्थिति को नियन्त्रित करने के कुछ उपाय सुझा सके। आज देश में मंदिर-मसजिद की समस्या सामने खड़ी है। पुरानी पिढ़ी अपने गलत विश्वासों और मान्यताओं के लिए नयी पिढ़ी को पीस रही है। कोई कावड मंदिर तो के मसजिद जा रही है, यह आज की धार्मिक स्थिति है। लोकतन्त्र, व्यक्तिवाद, सामाजिक और आर्थिक न्याय, समाजवाद, राष्ट्रवाद, साम्यवाद आदि वैचारिक पंथों में धर्म को कोई स्थान नहीं है, फिर भी यहा धर्म है, धर्म द्वारा प्रस्तुत जाति व्यवस्था, वर्णभेद और साम्प्रदायिकता है। परसाई जी ने अपने व्यंग्य निबंधों के माध्यम से धर्म के विकृत स्थिति पर व्यंग्य का प्रहार किया है।

"वैष्णव की फिसलन" नामक व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने ढोंगी धर्म-पुरोहितों पर व्यंग्य का प्रहार किया है जो बहुत ही मार्मिक फिरभी तीखा है।

"वैष्णव दो घण्टे भगवान विष्णु की पूजा करते हैं, फिर गादी-तकियेवाली बैठक में आकर धर्म को धन्धे से जोडते हैं। धर्म धन्धे से जुड जाय, इसी को "योग" कहते हैं।" [१]

शराब, गोश्त, कैबरे और औरत का व्यवसाय करते हुए भी व्यक्ति अपने आप को वैष्णव धर्मी समझता हैं। दूसरों की दृष्टि में अपने को पापी नहीं शुद्धात्मा ही समझता हैं, इस स्थिति को परसाई जी ने प्रकाश में लाया हैं।

प्राचीन समय में भारतवासी धर्म से अत्याधिक भयभीत रहता था, किन्तु आज भय नाम-मात्र के लिए भी उसके अन्दर नही हैं। बडे-से-बडे पाप कर्म मंदिरों व तीर्थ स्थानों पर नित्य होते ही रहते हैं।

"बाहर स्त्री-संसर्ग व्यभिचार हैं मगर मंदिर में सदाचार हैं। बाहर जिसे ग्रहण करना अनैतिक माना जाता हैं, उसे मंदिर में देवदासी बनाकर रख लेना पूरी तरह नैतिक हैं। ..... दुनिया के हर धर्म के धर्मस्थल में बुरा काम अच्छा बनाकर किया जाता हैं।" [२]

"धोबन को नहि दीनी चँदरिया" नामक व्यंग्य निबंध आज के ढोंगी महात्मा और संतों पर व्यंग्य का तिखा प्रहार करता हैं। इस निबंध में लेखक ने उन महात्माओं पर चोट की हैं, जो अपने समाज एवं पडोसियों के प्रति कर्तव्यों का निर्वाह करते नही हैं लेकिन दिखावे के लिए भगवान की भक्ति करते हैं।

"पडौस में चाहे कोई मर रहा हो तो देखने भी नही जायेंगे। बडे शान्तिमय, निर्मल आदमी हैं, क्योंकि लौ दुनिया से नही, परमेश्वर से लगी हैं।" [३]

आज युग में वही व्यक्ति धर्म का ढोंग रचना हैं, जो जीवन में अधिक-से-अधिक पाप करता हैं। पाप व्यक्ति के अन्दर भय उत्पन्न करता हैं और वह भय ही व्यक्ति को ईश्वर की शरण में ले जाता हैं। हर एक व्यक्ति अपने

---

१ "वैष्णव की फिसलन", पृ•९।

२ "सुनो भाई साधो", (सदाचार का जुआ), पृ•११८।

३ "वैष्णव की फिसलन", (धोबन को नहि दीन्हीं चदरिया), पृ•४५।

किसी-न-किसी स्वार्थ की पूर्ति हेतु ही भगवत् भजन की ओर कुछ समय के लिए आकृष्ट होता है और फिर पुन: अपने सांसारिक मायाजाल में फँस जाता है। परसाई जी ने ऐसे ईश्वर भक्तों पर व्यंग्य का प्रहार किया है। --

"मैं एक दिन गया, यह देखने कि इस पतित समाज में ऐसे भक्त कौन हो गये हैं। पर मुझे जो कुछ प्रमुख "साईभक्त" मिले, वे महान थे किसी पर गबन का मुकद्दमा चल रहा है। कोई सस्पेण्ड अफसर है। किसी की विभागीय जाँच हो रही है। मुनाफाखोर, मिलावटी, आदमी, का खून उसके "कल्यान" के लिए चूसनेवाले। अफसरों को घूस खिलाने का धन्धा करनेवाले। पीले पत्रकार। राजनिति में बनवास भोगनेवाले आधुनिक "राम" जो दशरथ की आज्ञा से नहीं, जनता के छेड देने से बनवास भुगत रहे हैं। फिर वे लोग जिनका धन्धा ही है चन्दा उगाहना किसी बहाने से और उसे पेट में डाल लेना।" [१]

मनुष्य सांसारिक माया-मोह के जाल में इतना फँस गया है कि उससे वह अब मुक्त होना नही चाहता। लेकिन एकदम ईश्वर से विमुख भी वह हो नही सकता। परिणामत: उसकी ईश्वर भक्ति अपने स्वार्थों की सिध्दी के लिए ईश्वर का आश्रय लेकर दूसरों की दृष्टि में स्वयं को विरक्त तथा सद्पुरुष दिखाते हुए की जानेवाली भक्ति है।

समाज में धर्म के नाम पर व्याप्त अन्धविश्वासों और रूढियों का भी खण्डन किया है। गंगा स्नान, व्यर्थ का जप-तप, आदि की परसाई जी ने हँसी उडाई है। प्रयाग जाकर त्रिवणी में बिना स्नान किए हुए घर वापस आने वाले व्यक्ति को हिन्दु समाज में अभागा, पापी समझा जाता है, इसके विपरित जो व्यक्ति रेलवे कर्मचारियों की गाली सुनते हुए --

"संडास में छिपकर रेल में बिना टिकट यात्रा करके गंगा स्नान करते है वे निहायत उजले लगते हैं। गंगा पाप विनाशनी है। तमाम पापियों को स्वर्ग भेजती है।" [२]

---

१ "वैष्णव की फिसलन", (धोबन को नहि दीन्हीं चदरिया), पृ॰४६।

२ "पगडंडियों का जमाना", (स्नान), पृ॰७२।

इस कारण बिना टिकट गंगा-स्नान के किए जाना कोई पाप नही है, पाप है प्रयाग जाकर भी त्रिवणी में स्थान किये बिना वापर घर आना। परसाई जी ने हिन्दु समाज में व्याप्त अन्ध विश्वासों पर व्यंग्य किया है। "कन्धे श्रवणकुमार के" नामक व्यंग्य निबंध में परसाई जी ने प्राचीन भारतीय मान्यताओं, जो आज के युग में असत्य एवं मिथ्या ही जान पडती है, बडी कुशलता के साथ व्यंग्य किया है।

बहुत प्राचीन काल से जन सामान्य पर धर्म का प्रभाव रहा है। सदियों से अज्ञान और अंधविश्वास फैलाने का काम राजसत्ता, अर्थसत्ता और धर्मसत्ता ने मिलकर किया है। धर्म सत्ता ने सामान्य पीडित जन के मन में ऐसी झूठी श्रध्दाएं, विश्वास पैदा किये है कि गुलाम आजाद होने को तैयार नही है। यज्ञ करनेवाले ये धार्मिक पाखण्डी जानते है कि यज्ञ करने से किसी भागवान की प्राप्ति नही होती, वह तो एक देशव्यापी षड्यंत्र है, जिसे धार्मिक पाखण्डी द्वारा किया जाता है। राजसत्ता, अर्थसत्ता और धर्मसत्ता ने मिलकर बहुजन समाज को यथा स्थिति में रखना चाहा और शोषण की परंपरा को बनाये रखा। अपितु वह काम भागवान के मार्फत करते है। ऐसा धर्म आज एक समस्या है जिसे परसाई जी ने अपने व्यंग्य का निशाना बनाया है।

घ) <u>आर्थिक समस्या</u> --

१५ अगस्त,१९४७ ई॰ को भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई, लेकिन राजनीतिक दृष्टि से स्वतंत्र भारत आर्थिक दृष्टि से पूरी तरह अपंग था। देश के आर्थिक विकास को ध्यान में रखते हुए समय समय पर पंचवर्षीय योजनाएं भी लागु की गयी। प्रथम दो योजनाओं से देश के आर्थिक विकास में सहायता मिली। पं॰ जवाहरलाल तथा लाल बहादुर शास्त्री की मृत्यु के पश्चात देश की शासन व्यवस्था का संचालन उन लोगों के हाथों में पहुँचा, जो अपना स्वार्थ पहले देखते

थे। व्यक्तिगत स्वार्थ-पूर्ति की भावना ने देश की राजनीति में व्यापक स्तर पर भ्रष्टाचार को जन्म दिया। अदूरदर्शिता, अकुशलता, फिजूलखर्ची, अपव्यय, रिश्वतखोरी, कामचोरी आदि प्रवृत्तियाँ चरमसीमा पर पहुँच गये। व्यक्तिगत स्वार्थो की पूर्ति हेतु देश और जनता के साथ बडी-से-बडी गद्दारी की गई। नेताशाही, अफसरशाही और सेठशाही की मिली-जुली साठ-गाँठ ने देश में व्यापक स्तर पर आर्थिक भ्रष्टाचार को जन्म दिया। नेताओं और अफसरों ने सेठों से रिश्वत लेकर अपने अपने घरों को भरना शुरू कर दिया, दूसरी ओर तरफ टैक्सों की अधिकता, जमाखोरी, मुनाफाखोरी के कारण मँहगाई बढती चली गई। कमर तोड मँहगाई ने आम आदमी के जीवन को दूभर बना दिया। एक तरफ तिर्योरियों में धन एकत्र होता गया तो दूसरी तरफ सूखी रोटियों के भी लाले पडने लगे। जनसंख्या की वृध्दि ने जीवन-जीने के साधनों और बेरोजगारी की समस्या को और भी व्यापक बना दिया।

देश के आर्थिक विकास के लिए योजनाएँ कार्यान्वित की गई। लेकिन बढते हुए भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, घूसखोरी के कारण इन योजनाओं पर व्यय किये जानेवाले धन का आधे से ज्यादा भाग नेताओं, अफसरों तथा दलालों के पेटों में ही समा गया। किसानों और गरीबों के जीवन की समस्यायें कम होने के स्थान पर दिन-ब-दिन बढती ही गयी। दूसरी तरफ भारत विदेशी ऋण से दबता गया, जिसके परिणामस्वरूप विदेशों में भारत की साख गिरती गई। आज भी भारत की आर्थिक स्थिति इतनी अनिश्चित और भयंकर है कि चारों तरफ आर्थिक विषमता, अराजकता और भ्रष्टाचार का ही बोलबाला है। देश की अर्थव्यवस्था को लेकर लिखा हुआ परसाई का व्यंग्य बहुत ही मार्मिक किन्तु तिखा है।

> "अपनी अर्थव्यवस्था को डेंगु हो चुका है। लेटती है तो उठा नहीं जाता। बिठा दो, तो लुढक जाती है। पूछता हूँ - माताजी, यह क्या हो गया? कहती है - बेटा, डेंगु हो गया। बाहर से इन्फेक्शन आया था। मेरे बेटे रुपये को भी डेंगु हो गया था। कितना दुबला गया बेचारा।" [१]

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (डेंगु, अध्यात्म और लेखक), पृ.१२२।

देश की आर्थिक स्थिति को लेकर लिखा हुआ परसाई जी का व्यंग्य सबसे अधिक व्यापक और तिखा है। देश में करोडों दीन-हीन, गरीब और भूख से व्याकुल व्यक्तियों को देख उनकी आत्मा रो उठती है। एक तरफ ऊँची ऊँची इमारतें है, फाइव स्टार होटल हैं, जहाँ शानो-शौकत और ऐश-ओ-आराम की जिन्दगी मौजुद है और दुसरी ओर सडको और गन्दे नालों के किनारे भूख-प्यास से पीडित नंगी मानवता बिलख रही हैं। यह वैषम्य देख परसाई की आत्मा रो उठती है। लाचार व्यंग्यकार अपने आप को प्रश्न करता है कि जब इन्हे पेट भर खाने को रोटी नही मिल पाती तो फिर ये लोग जीवित क्यों हैं? और लाचार व्यंग्यकार अपने प्रश्न का उत्तर स्वयं ही खोजते हुए वह कहते हैं --

"ये मरने की इच्छा को खाकर जीतित है। ये रोज कहते हैं - इससे तो मौत आ जाय तो अच्छा!" [१]

स्वतंत्रता के पश्चात् देश की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिये अनेक योजनाएं बनायी गयी किन्तु वे सभी असफल सी ही रही। इन योजनाओं का अधिकांश लाभ केवल मुट्ठी भर लोगों तक ही सीमित रहा परिणामस्वरूप अमीर और गरीब के बीच की खाई बढती ही गयी।

"भारत को चाहिए : जादुगर और साधु।" [२]

शीर्षक निबंध में परसाई ने भारत में व्याप्त आर्थिक वैषम्य का चित्रण करते हुए व्यंग्य के माध्यम से अपनी चिंता व्यक्त की है। यहाँ एक वर्ग तो उन व्यक्तियों का है जो ठाठ से महलों में आधुनिक साज-सज्जा के साथ जीवन जी रहा है। दूसरा वर्ग उन लोगों का, जो सुबह से शाम तक अपने पेट भरने के लिए अन्न की तलाश के लिए राशन की दुकान पर खडा रहता हैं। इसके अतिरिक्त एक वर्ग उन लोगों का भी हैं जो रेलवे के पुल के नीचे या सडकों के किनारे पर अपनी जीवन यात्रा कर रहें हैं। इतनी विषमता आज अपने देश में फैली हुई हैं फिर भी देश के कर्णधार अब तक देश को आर्थिक दृष्टि से आत्म-निर्भर नही बना सके।

---

१ "वैष्णव की फिसलन", (अकाल-उत्सव), पृ॰१७।
२ -- वही -- (भारत को चाहिए : जादुगर और साधु),पृ॰३५।

ड) साहित्यिक समस्या --

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् देश के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक क्षेत्र में अनेक विसंगतियाँ दिखाई दी, वहाँ साहित्य और साहित्यकार भी अपने आपको बचा न सका। आज साहित्यकार के अन्दर अनेक क्षुद्र भावनाएं जाग्रत हुई जिन्होंने उसे स्वार्थी बनाया। आज का साहित्यकार अपने आपको व्यक्तिगत स्वार्थों की सीमा में बाँधकर अपना या अपने निकट के कुछ साथियों का गुट बना लेता हैं। स्वतंत्रता के बाद, वह राष्ट्रीय एकता की भावना जो अधिकांश साहित्यकारों को एकता के सूत्र में बाँधे हुए थी, टूट गई और इसी के साथ साहित्यकार भी टूटते रहे। साहित्य जगत में भी अवसरवादिता, गुटबन्दी और मुखौटेबाजी ~~घुस बैठी।~~ उनके जीवन की अनास्था और अविश्वास ने उनके साहित्य में भी अनास्था, अविश्वास और कुंठा को जन्म दिया। कोई साहित्यकार थोडा-बहुत और प्रशंसित होकर अहंकार से अपने आप को महान साहित्यकार समझने लगता हैं। उसे अपने वैशिष्ट्य के लोप हो जाने का डर रहता हैं, इसलिए साहित्यकार अपने आपको जनता से, भीड से बचाते रहते हैं ; --

> "देखो नहीं, अच्छे लेखकों की सबसे बडी चिन्ता यह हैं कि भीड के दबाव से कैसे बचा सके।" [१]

आज का साहित्यकार राजनीति का दास बना हुआ हैं। वह राजनीतिक दलबन्दी में अपने आपको पूरी तरह फँसाये हुए हैं। जिस पर व्यंग्य करते हुए परसाई लिखते हैं ; --

> "जिसने हमे क्रान्ति सिखायी थी और जो कहता हैं कि मेरी आत्मा में हिमालय घुस गया हैं, उसे मैने अभी देखा। जिसने ज्वाला धधकाने की बात की थी उसे भी अभी देखा। जो सन्त कवियों की स्पिरिट को आत्मसात किये हैं, उसे भी देखा। कहा देखा ?

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (हम,वे और भीड), पृ०१२।

मुख्यमंत्री के आस-पास। तीनो में स्पर्धा चल रही थी कि कौन किस जेब में घुस जाये। कोट की दो जेबों में दो घुस गये। तीसरे ने कहा -- हाय, अगर मुख्यमंत्री पतलुन पहने होते, तो मैं उसकी जेब में घुस जाता। तीनों एम्प्लायमेंन्ट एक्सचेंज से कार्ड बनवाकर जेब में रखे हैं। किसी को कुछ होना है, किसी को कुछ।"[१]

साहित्य और राजनीति पूरक नही रही, अपितु राजनीति आज साहित्य पर हावी है। श्रेष्ठ तथा स्वतंत्र साहित्य लेखन में यह सबसे बडी बाधा है क्योंकि जब-जब साहित्य पर राजनीति का नियंत्रण रहा है, लेखक की सत्ता सुरक्षित नही रही। साहित्यकार को चाहे अनचाहे राजनीतिक नियंत्रण को स्विकार करना ही पडता है और जो साहित्यकार ऐसा नही करते, राजनीतिक दल, नेता, राजनीतिक तत्व उसे जीने नही देते। ऐसे कम ही साहित्यकार मिलते हैं, जो राजनीतिक नियन्त्रण में अपने "स्व" को स्वतंत्र रखते हूए निष्पक्ष रूप से साहित्य सर्जना करते हैं। वर्तमान युग में ऐसे साहित्यकारों का अभाव है। परसाई जी ने अपने व्यंग्य निबंधों से साहित्य पर अंकुश तथा राजनीतिक दबाव में लेखन करनेवाले साहित्यकारों पर व्यंग्य किया हैं।

आज हिन्दी जगत में अपने नाम से दूसरों की कविताएँ और कहानियाँ छपवाने वाले साहित्यकारों की कोई कमी नही हैं। इधर-उधर की बीस-तीस पुस्तके इकठ्ठी करके उनकी नकल करने से मौलिक ग्रंथ तैयार हो जाता हैं। ऐसे कोई गिरोह हैं जो लेखकों की चोरी करते हैं, उनसे साहित्य सृजन करवाते हैं और उन्ही कृतियों को किसी और के नाम से छापवाते हैं, जिसपर प्रकाश डालते हूए परसाई जी लिखते हैं ; --

"लेखकों की चोरी करनेवाले कई गिरोह हैं। वे भीड में शिकार को ताडते रहते हैं और किसी बहाने उसे भीड से अलग करके, अपने साथ किसी अंधेरी कोठरी में ले जाते है। ..... तब स्वतंत्र चिंतक सिर्फ "घोंघो" की आवाज निकाल सकता हैं। गिरोहवाले उस "घोंघो" में सौन्दर्यशास्त्रीय मूल्य ढूँढकर बता देते हैं। उसे तत्वज्ञान सिध्द कर देते हैं।"[२]

---

१ "पगडंडियों का जमाना", (हम,वे और भीड), पृ.१४, १५।
२ --- वही ---

साहित्यकार, कवि, लेखकों की प्रवृत्तियों के अतिरिक्त साहित्य की आलोचना करनेवाले समालोचक की प्रवृत्तियों पर परसाई जी ने "इति श्री रिसर्चाय" नामक निबंध में व्यंग्य किया हैं। हिन्दी भाषा-भाषियों द्वारा अनावश्यक रूप से अंग्रेजी आदि के विदेशी शब्दों और भाषा के प्रयोग की परसाई जी ने आलोचना की हैं। भारतीय समाज में ऐसे व्यक्तियों का अभाव नहीं हैं जो अंग्रेजी का काला अक्षर भैंस बराबर भी नहीं जानते। लेकिन अपने समाज में अपने को मॉडर्न कहलाने और व्यर्थ की वाह-वाह लूटने के लिए सत्यनारायण की कथा का निमंत्रण-पत्र भी अंग्रेजी में छपवाते हैं। परसाई जी ने "ग्रीटिंग कार्ड और राशन कार्ड" नामक व्यंग्य निबंध में ऐसे ही व्यक्तियों पर व्यंग्य किया हैं।

इसतरह साहित्य में प्रचलित विशेष प्रवृत्ति, साहित्यिक चोरी, साहित्यिकों की ईर्ष्या भावना, समालोचक का कर्तव्य, काव्यवाचन की अतिशयना आदि प्रवृत्तियाँ साहित्य के क्षेत्र में समस्या बनकर खड़ी हुई हैं जिस पर परसाई जी ने प्रकाश डाला हैं।

ट) सांस्कृतिक समस्या --

संस्कृति वह तत्व हैं, जो देश के नागरिकों के जीवन का संस्कार करती हैं। भाषा, वर्ण, रहन-सहन, आचार-विचार आदि की भिन्नता होते हुए भी उन्हें एकता के सूत्र में बाँधे रखती हैं। भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे प्राचीनतम् संस्कृति हैं। अनेकता में एकता उसकी अपनी एक खासियत हैं, जो उसे आज तक जीवित रखे हुए हैं। विभिन्न मतों, सिध्दान्तों, भाषा, विचारधाराओं प्रवृत्तियों रहन-सहन, खान-पान और विभिन्न भौगोलिक स्थितियों के रहते हुए भी वह लोगों के बीच परस्पर समन्वय स्थापित कर राष्ट्रीय एकता और अखण्डता की भावना को बलवती प्रेरणा देती रही हैं। आधुनिक काल में भी अनेक महापुरुषों, विचारकों और साहित्यकारों ने इसी समन्वयवाद की प्रतिष्ठा करने का प्रयास किया हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व भारतवासियों के हृदय में अपनी संस्कृति, अपने रीति-रिवाज, खान-पान, रहन-सहन आदि के प्रति जो आस्था थी, स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात वह तेजी से टूटती चली गई। देश की अवसरवादी राजनीति और पाश्चात्य शिक्षा, सभ्यता के फलस्वरूप जन्मी आधुनिकता ने सांस्कृतिक और नैतिक दृष्टि से हमारा पतन शुरू कर दिया। हमारे आचार-विचार, खान-पान, वेश-भूषा सब कुछ बदल गये। चरित्र जो हमारे जीवन की अमूल्य धरोहर समझा जाता था वह भी पतित होता चला गया। आज जीवन जीने का तरीका पूरी तरह बदल गया है। आज की युवा पीढ़ी को पुराने-जीवन-मूल्यों से एक तरह की नफरत सी है। नयी और पुरानी पीढ़ी का संघर्ष आज के सांस्कृतिक जीवन की सबसे बडी विडम्बना है। देश की युवा पीढ़ी पश्चिमी अन्धानुकरण से पनपनेवाली आधुनिक सभ्यता की गुलाम बनती चली गई। आधुनिकता और फैशनपरस्ती के नाम पर देशवासियों का नैतिक और चारित्रीक पतन होता चला गया। केवल अंग-प्रदर्शन, मांस-मदिरा का सेवन, क्लबों और पाश्चात्य रंग में रंगे हुए सांस्कृतिक समारोहों में अपनी गर्लफ्रेंड्स् के साथ रंग-रेलियाँ मनाने की प्रवृत्ति समाज में दिन-ब-दिन बढती गई। जगह-जगह "बार" खुल गये और शराब पीना आधुनिकता की पहचान बन गया। लडके-लडकीयों की वेश-भूषा बदल गई। रंग-बिरंगी पोशाकों में सुसज्जित लडकियाँ राजमार्गों घूमती-फिरती नजर आने लगी। स्त्री का आभूषण समझे जाने वाला लज्जा-भाव पूरी तरह लुप्त हो गया। आज हर तरुणी अपने पर्स में मेकअप की सामग्री रखकर दिन में न जाने कितनी ही बार मेक-अप करती रहती है। उसके चेहरे पर मेकअप की परते आवरण की तरह छायी रहती है जिसपर परसाई जी ने बडा ही मार्मिक तिलमिला देनेवाला व्यंग्य लिखा है।

"सुन्दरी, पाउडर की परते धूल रही हैं, स्नो बह रहा है, रूज घुल रहा है। मेरी खातिर नही तो अपने मेकअप के खातिर ही रोना बन्द कर।"[१]

---

१ "जैसे उनके दिन फिरे", (मेनका का तपोभंग), पृ.५८।

हमारे नगर और महानगर पूरी तरह पाश्चात्य रंग में रंगे हुए हैं। बड़े शहरों और महानगरों में स्थान-स्थान पर बड़े-बड़े शानदार होटल, बार और रेस्ट्रारंट खुले हुए हैं, जहाँ खुलकर शराब का सेवन होता हैं, --

"कैबरे, डांस, के नाम पर नंगी औरतों को नचाया जाता हैं, खुलकर स्त्रियों का भोग भी किया जाता हैं।" [१]

इस स्थिति पर परसाई जी ने "वैष्णव की फिसलन" नामक व्यंग्य निबंध में जमकर प्रहार किया हैं। होटल बार, रेस्ट्रांरंट ये सभी अनेक प्रकार के व्यभिचार के अड्डे हैं, जहाँ हर प्रकार का अनैतिक कार्य होता हैं। हमारे सांस्कृतिक जीवन में बढ़ती हुई विसंगति आज एक समस्या बन खड़ी हैं जिस पर परसाई जी ने जमकर प्रहार किया हैं।

इस तरह परसाई जी ने अपने निबंधों में समस्याओं को अंकित किया हैं।

---

१ "वैष्णव का फिसलान", पृ॰१३।